Research Chronicler: International Multidisciplinary Refereed Peer Reviewed Indexed Research Journal ISSN: Print: 2347-5021 www.research-chronicler.com ISSN: Online: 2347-503X

बिहार के लोकगीतों में दार्शनिक–पुट : एक अध्ययन

डॉ॰ कुमोदनी कुमारी

एम॰ए॰पी॰एच॰डी॰, अहियापुर, मुजफ्फरपुर, (बिहार) भारत

सार–संक्षेप

जब हम संगीत की बात करते हैं तो इसमें शास्त्रीय–संगीत, कंठ–संगीत, वाद्य–संगीत, शास्त्रीय–नृत्य और लोक–नृत्य सभी का समावेश हो जाता है। प्रारंभ में जब संगीत का कोई शास्त्र नहीं था तो लोकगीत ही समाज में प्रचलित थे। जब लोकगीतों में आध्यात्मिक तत्त्व नहीं होते और अध्यात्म की बात उठती है तो हमें यह मानना पड़ता है कि भारतीय दर्शन का प्रारंभ मुख्यतः आध्यात्मिक जिज्ञासा में हुआ है। अध्यात्म से तात्पर्य विद्वानों ने आस्तिकता से लिया है। 'ईश्वर है' – यह नारा आस्तिकों का है और अध्यात्म की बात उठती है तो हमें यह मानना पड़ता है कि भारतीय दर्शन का प्रारंभ मुख्यतः आध्यात्मिक जिज्ञासा में हुआ है।

मुख्य शब्द– लोकगीत, आध्यात्मिक, विषय, अस्तित्व, कल्पना, अभिप्राय, वाणी

बिहार की राजनीतिक राजधानी तो पटना है, लेकिन सांस्कृतिक राजधानी के रूप में मुजफ्फरपुर का नाम सर्वोपरि है। बिहार प्रान्त के लोगों में, लोक देवताओं की पूजा–अर्चना में लोकगीतों का अपना महत्व है। यहाँ के जनपदों में सूफी मत जो पश्चिम से आए मलंग, फकीरों से प्रचारित हुआ उन्होंने त्याग, एकांत साधना और 'बहुजन हिताय' की भावना फैलाकर सांस्कृतिक क्रान्ति का उद्घोष किया। लोकगीतों के माध्यम से न केवल प्रकृति पूजा हुई है, बल्कि लोकनृत्य, लोक संगीत ने लोक विस्तार को यहाँ के लोकगीतों में जिनमें कई बोलियाँ सम्मिलित हैं, प्रमुख रूप से भोजपुरी, बज्जिका, मैथिली, मगही, अंगिका समाविष्ट हैं। राष्ट्रीय संगोष्ठी में हम दोनों इस

अंचल के प्रान्त से देश स्तर में गाए जाने वाले लोकगीतों पर विमर्श करना चाहते हैं। गायन, वादन, नृत्य इन तीनों को दृश्य और श्रव्य कला के रूप में जाना जाता है। जब हम संगीत की बात करते हैं तो इसमें शास्त्रीय–संगीत, कंठ–संगीत, वाद्य–संगीत, शास्त्रीय–नृत्य और लोक–नृत्य सभी का समावेश हो जाता है। प्रारंभ में जब संगीत का कोई शास्त्र नहीं था तो लोकगीत ही समाज में प्रचलित थे। ऐसी बात नहीं है कि लोकगीतों में आध्यात्मिक तत्त्व नहीं होते और अध्यात्म की बात उठती है तो हमें यह मानना पड़ता है कि भारतीय दर्शन का प्रारंभ मुख्यतः आध्यात्मिक जिज्ञासा में हुआ है। अध्यात्म से तात्पर्य विद्वानों ने आस्तिकता से लिया है। 'ईश्वर है' – यह नारा आस्तिकों का है। और अध्यात्म की बात उठती है तो हमें यह मानना पड़ता है कि भारतीय दर्शन का प्रारंभ मुख्यतः आध्यात्मिक जिज्ञासा में हुआ है।

मानविकी संकाय का प्रमुख विषय दर्शन का अर्थ भारतीय चिंतकों ने केवल विचार करने का अर्थ वाला विषय न लेकर विश्वबंधुत्व, सामाजिक सौहार्द, देश प्रेम, एकता आदि भावना के दिशा निर्देशक विषय से भी लिया है। देशप्रेम की भावना बिहार के लोकगीतों में प्रवर है और लोक गीत वैसे

गीत हैं, जिनका आकार अपेक्षाकृत छोटा होता है, लेकिन उनमें 'गेयता' की प्रधानता हम पाते है। जब हमारा देश गुलाम था, तब शिवहर जिला स्थित देकुली धर्मपुर में एक लोक–गीत होली के समय उमंग के साथ गाया जाता था–

चुनड़ी न रंगवे हम केसर रंग में,

जाबैत रहते फिरंगीक राज।

उस समय लोगों की यह भावना थी कि हमारा देश शीघ्र ही स्वाधीन हो। 1857 को प्रसिद्ध इतिहासकारों ने धार्मिक आंदोलन का नाम दिया है। उस समय बाबू और वीर कुंवर सिंह के गुरू विखियादत्त झा थे और उस समय दलमंजन सिंह कुँवर सिंह के साथ कंधे से कंधा मिलाकर आजादी की लड़ाई में सम्मिलित थे तथा लोक चेतना जग चुकी थी कि हमें आजाद होना है। जब कुँवर सिंह ने अपने को आजादी की बलिवेदी पर कुर्बान किया तो गाय, भैंस चराने वाले मैथिली गीत गाते थे–

पूछिओन ग दलभंजन सिंह स

आब लड़तैन कि नय।

मैथिली का उपर्युक्त चरवाहा गीत तत्कालीन जन–मानस की मानसिकता को दर्शाता है। मिथिला में एक गीत और प्रसिद्ध था–

नाव फिरंगी का डगमग करैछै,

अब हमर मून नीक लगैछै।

आजादी की लड़ाई में शिवहर देकुली धर्मपुर के आजादी के दीवाने भागीरथ आय और रामधनी राय की कुर्बानी आज भी स्मरणीय है, जिन्होंने फिरंगी द्वारा बनाए गए लोहा–पुल को स्वस्त करते हुए फिरंगी सेना को रोका था और अंग्रेजों द्वारा मारे गए थे। उनकी याद में देकुली धर्मपुर में आज भी होली के समय यह प्रथम गान होता है–

भागीरथ–रामधनी मर गेलन,

हम सम्भै के होली उसर गेलन।

एही देशवा के आजाद उहे कर गेलन।।

उपर्युक्त गीतों से देश प्रेम की भावना अभिव्यक्त होती है– जो मानव मूल्य का बोधक है।

प्रायः सभी प्रकार की सांगीतिक रचनाएँ मानव द्वारा रचित होती हैं। दुर्भाग्यवश अंग्रेजी शासन द्वारा प्रारंभ की गई वर्तमान शिक्षा प्रणाली ने जो किंचित संशोधनों के साथ आज भी विद्यमान है, पूर्ण शिक्षा की आत्मा, कविता, संगीत और कला के अध्ययन को पंगु बना दिया है और आज की शिक्षा प्रणाली मस्तिष्कीय क्षमता पर आधारित है, जो अद्वैत की अवधारणा को व्यावहारिक रूप प्रदान करने में असमर्थ साधन है। यहाँ स्मरणीय है कि मस्तिष्क वैसी कड़ी का काम करता है जो दृश्य एवं अदृश्य की विभाजक रेखा है। इसे एक तरह का अवरोधक भी कहा जा सकता है, क्योंकि यह अद्वैत की स्थापना का पक्षधर नहीं होता कि इसने अधिकांश अस्तित्व दृश्य जगत से निर्मित एवं पोषित होता है, इसलिए ऐसी स्थिति में संगीत एवं कला सर्वाधिक सशका एवं प्रभावशाली साधन है। इस प्रान्त में प्रचलित गीत पी तो संगीत के अन्तर्गत ही हैं। बिहार की परंपरागत संगीतात्मक विद्या लोकगीत में अंगिका अंचल की चर्चा समीचीन प्रतीत होती है। लोक–व्यवहार से जुड़े–'सुन हो भैया लोक जहान' नामक नाटक में लिखित भागलपुर के चौसा प्रखंड का अंगिका गीत

'सिरुआ–बिशुआ' पर्व पर आज भी बड़ी श्रद्धापूर्वक गाया जाता है–

धरमपुर इलाका जगह पचरासी,

गंगा पार से ऐले, भागलपुर के वासी,

सुनऽ हो भैया....[2]

बिहार के लोकगीतों में शामा–चकेवा ऐसा गीत है, जिसमें भाई–बहन के रिश्ते की अटूट डोर झलक उठती है। मसलन–

यही पार गंगा रे दइवा कि ओही पार बालू रेत,

बीचे–बीचे चकवा हो भइया, खेले जुआ हो सार

तोहरी रोधनिया गे बहिनी, मोरो न जे सोहाय,

आबे देही अगहन महिनवाँ गे बहिनी,

कटइवई सरीहन के धान।

बारहवीं से चौदहवीं शदी तक बिहार में जो राधा–कृष्ण की भक्ति के छन्द रचे गए उनमें श्रृंगार की भावना देखने को मिलती है, साथ ही उनमें काम की सूक्ष्म भावनाओं का एक स्रोत बहता सा दिखाई देता है। कृष्ण और राधा को नायक–नायिका के रूप में लाने वाले मैथिल कोकिल विद्यापति का नाम अभिनव जयदेव के रूप में प्रसिद्ध है। इनकी रचनाओं में जो तीन भाषाओं में रचित हैं– संस्कृत, अवहट्ट और मैथिली। इनमें तीन तत्त्व प्रमुख हैं श्रृंगार सम्बन्धी, भक्ति सम्बन्धी और विविधा इन्होंने राधाकृष्ण के मिलन प्रसंग में वयः सन्धि, दूती, मान, मानभंग, अभिसार, मिलनं, विरह, नखशिख तथा श्रृंगार की भिन्न–भिन्न अवस्थाओं का रसपूर्ण वर्णन किया है। इनकी

पदावली संगीत के स्वरों से गुंजायमान है।

बिहार के जयदेव ने प्रेम–प्रसंग के गीतों में राधा–कृष्ण की प्रीति–गाथा मैथिली में कुछ इस तरह लिखी है–

पथ गति नयन मनसिज पुरल संधान।

टुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर।

समय न बुझए अचतुर चोर।।

बिटगधि संगिनी सब रस जान।

कुटिल नयान कएल समधान।।

चलल राज–पथ दुहु उरझाई।

कह कवि सेखर दुह चतुराई।।

कवि कोकिल की उपर्युक्त काकली का भावार्थ है कि पथ में जाते हुए नटवर कृष्ण और राधा प्यारी की आँखें चार हो गयीं। तब फिर दोनों के हृदय में काम का संचार हुआ। श्रृंगार रस समाज के लिए लोक रंजनकारी तत्व का काम करता है। स्पष्ट कहना चाहते हैं कि विश्व की समस्त भाषाओं–बोलियों के साहित्य में श्रृंगार की प्रधानता है और भारतीय श्रृंगारी कवियों ने राधा–कृष्ण को प्रधान उपास्य देव स्वीकार किया है।

संस्कृत और भाषा का श्रृंगार साहित्य राधा–कृष्ण की केलि–क्रीड़ाओं से भरा पड़ा है लेकिन कवि शेखर' के मधुर और कोमल पद अन्यत्र बड़ी कठिनाई से मिलते है।

मैथिली के 'कवि कंठहार' ने अपने काव्यों में सावयव कल्पना की है। विरह–पीड़िता राधा की शीर्णता अर्थात "प्रेम विरह में कुम्हलाया शरीर'' के वर्णन में अवयव कल्पना का उदाहरण सुनें–

माधव जानल न जिवति राही।

जतवा जकर लेले छलि सुन्दरी

से सवे सोपलक ताही।

इन्होंने न केवल श्रृंगार रस के गीत रचे बल्कि देवी वंदना, गंगा–स्तुति के पूजन भी मैथिली में लिखे हैं, जो आज भी बड़े मनोयोग से गाए जाते हैं–

जय–जय भैरवी असुर भयाऊनी,

पशुपति भामिनी पाया।

सहज सुमति वर दिअ हे गोसाऊनी,

अनुगति गति तु अ पाया।।

इस तरह उन्होंने जो गंगा–स्तुति लिखी है उसमें भक्त के समर्पण की भावना झलकती है, यही तो अध्यात्म का द्योतक है–

कि करब जप–तप जोग ध्याने,

जनम कृतारथ एक ही स्नाने।

भनहि विद्यापति समदओ तोही,

अंतकाल जनु विसरह मोही।

एक कहावत समाज में अत्यन्त प्रचलित है कि कोस–कोस पर पानी बदले, तीन कोस पर वाणी, यहाँ हमारा अभिप्राय मुजफ्फरपुर और छपरा–सीवान के भोजपुरी गीतों में दर्शन के तत्त्व को स्पष्ट करना है। भोजपुरी क्षेत्र में रघुवीर नारायण ने संपूर्ण भारत का चित्र–गीत अपने बटोहिया गीत में उकेर दिया है। उनके द्वारा रचित पूरे गीत को विद्वत् जन के समक्ष सीमित समय में रखना संभव नहीं है, इसलिए गीत के मुख्य अंश हम प्रस्तुत कर रहे हैं–

सुन्दर सुभूमि भईया भारत के देसवा सेय

मोर प्रान बसे हिप–खोह रे बटोहिया।।

एक द्वार घेरे रामा हिम–कोतवालवा से;

तीन द्वार सिन्धु पहरावे रे बटोहिया।।

जाहुँ–जाहुँ भइया रे बटोही! हिन्द देखिआउय

जहवाँ कुहुकि कोइली बोले रे बटोहिया।

फिरि–फिरि हिया सुधि आवे रे बटोहिया,

अपर प्रदेश देस, सुभग सुघर बेस,

मोर हिन्द जग के निचोड़ रे बटोहिया,

सुन्दर सुभूमि भइया भारत के भूमि जेहिय

जन रघुवीर सिर नावे रे बटोहिया।

निष्कर्षतः हमारा आशय यह स्पष्ट करना है कि बिहार की विभिन्न बोलियों में जिन लोकगीतों की रचना की गई है उनमें आध्यात्मिक तत्त्व सर्वत्र मौजूद हैं और अध्यात्म भारतीय दर्शन में बड़े महत्त्व का तत्त्व है। अतएव यहाँ के लोकगीतों में दार्शनिक पुट मौजूद हैं।

सन्दर्भ–सूचीः

1. भारतीय दर्शन, भूमिका, पृष्ठ 3, डॉ0 नन्दकिशोर देवराज, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान (हिन्दी ग्रन्थ अकादमी प्रभाग), राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन, हिन्दी भवन, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ–22601, षष्ठ संस्करण, 2002
2. कोशी–शोध–सृजन, पृ0, 70–73, आलेख – लोकगाथा और विशु राउत, सम्पादकः डॉ0 विनय कुमार चौधरी, अंक–1, वर्ष–1 जनवरी–जून, 2011
3. श्रृंगार–रस का शास्त्रीय विवेचन, पृ0, 103, डॉ0 राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, प्रकाशक सरस्वती पुस्तक भवन, आगरा–3, 1969

4. विद्यापति पदावली, पृ0, 48, संपादन और शब्दार्थ श्री रामवृक्ष बेनीपुरी, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल दरबारी–बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद–1, छठवाँ संस्करण, 2012

5. सौन्दर्य शास्त्र के तत्त्व, पृ0, 200, कुमार विमल, राजकमल प्रकाशन प्रा॰ लि॰, 1–बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली 110002, आवृत्ति, 1998